7093

तित्थयर

जैन भवन

वर्ष ४ अंक १० : फरवरी १९८१

बनारसी साड़ी

इण्डियन सिल्क हाउस

कॉलेज स्ट्रीट मार्केट • कलकत्ता-१२

PRAKASH TRADING COMPANY

12 INDIA EXCHANGE PLACE
CALCUTTA-700001

Gram : PEARLMOON

Telephone : 22-4110
22-3323

THE BIKANER WOOLLEN MILLS

Manufacturer and Exporter of Superior Quality
Woollen Yarn/Carpet Yarn and Superior
Quality Handknotted Carpets

Office and Sales Office :

BIKANER WOOLLEN MILLS
Post Box No. 24
Bikaner, Rajasthan
Phones : Off. 3204
Res. 3356

Main Office
4 Mir Bhor Ghat Street
Calcutta-700007
Phone : 33-5969

Branch Office
The Bikaner Woollen Mills
Srinath Katra : Bhadhoi
Phone : 378

तित्थयर

श्रमण संस्कृति मूलक मासिक पत्र
वर्ष ४ : अंक १०
फरवरी १९८१

☐

संपादन
गणेश ललवानी
राजकुमारी बेगानी

☐

आजीवन : एक सौ एक
वार्षिक शुल्क : दस रुपये
प्रस्तुत अंक : एक रुपया

☐

प्रकाशक
जैन भवन
पी - २५ कलाकार स्ट्रीट
कलकत्ता-७००००७

☐

मुद्रक
सुराना प्रिन्टिंग वर्क्स
२०५ रवीन्द्र सरणी
कलकत्ता-७००००७

सूची

पुरुलिया की पुराकीर्ति और
प्राचीन सराक संस्कृति २९३
श्रीपाल ३०५
जीव ३०९
जैन धर्म व जैन प्रतिमाएँ ३१३
जैन पत्र-पत्रिकाएँ : कहाँ/क्या ३१८

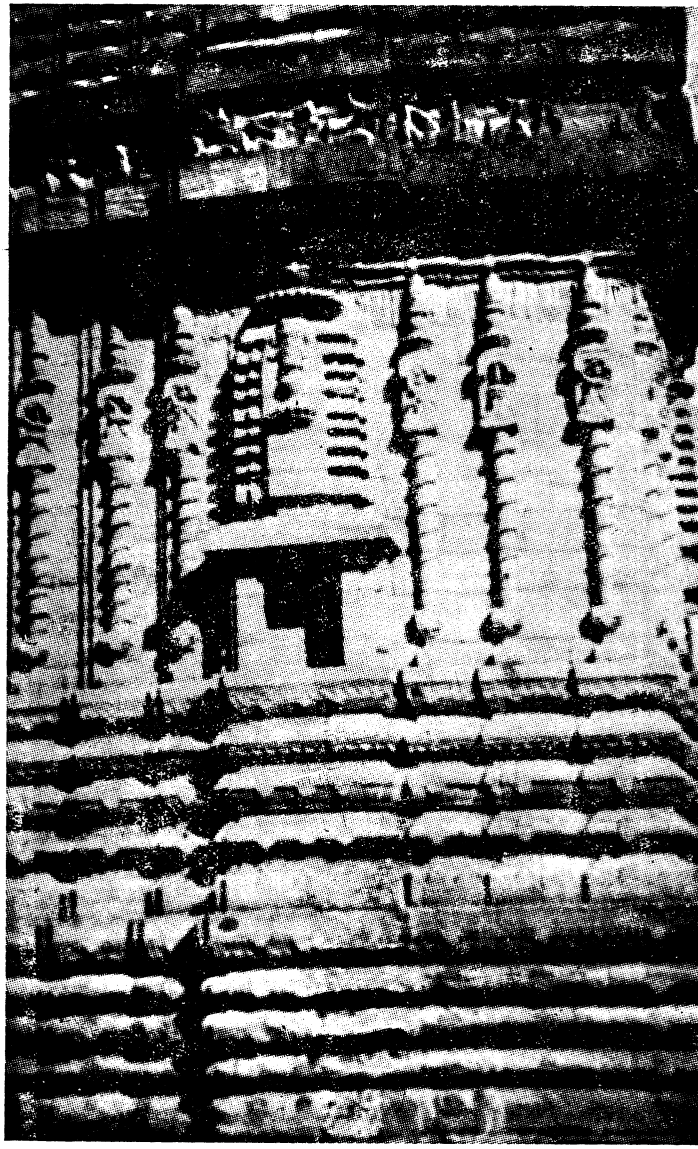

वहिर्भाग की शिल्प कला, जैन मन्दिर, बराकर
चित्र : युधिष्ठिर माजी

पुरुलिया की पुराकीर्ति और प्राचीन सराक संस्कृति

—श्री युधिष्ठिर माजी

आज से प्रायः ढाई हजार वर्ष पहले सारा पुरुलिया अंचल जंगलमय था। संथाल, मुण्डा, कोल, भील इत्यादि आदिवासियों के अतिरिक्त सभ्य मनुष्यों के रहने लायक यह स्थान नहीं था। सुवर्ण रेखा, कांसाई, दामोदर, बराकर आदि नद-नदियों के तटवर्ती अंचल तो प्रकृति के लीला क्षेत्र ही थे। एक विशिष्ट प्रकार की आश्रम सभ्यता का निर्माण करने के लिए यह स्थान अति उत्तम था। इसीलिए जैन धर्म के प्रचारकों ने यहाँ आकर अहिंसक आश्रम सभ्यता का आलोक प्रज्ज्वलित कर दिया।

यहाँ के आदिवासी बड़े ही हिंस्र और विपदजनक प्रकृति के मनुष्य थे। अतः उन्हें वज्र भूमिज कहा जाता था और उनकी निवास भूमि को terrible land। दूसरी ओर जैन धर्म के प्रचारक गण थे नम्र और अहिंसक। इसीलिए उन्हें सुधि भूमिज कहा जाता था। ये श्रावक थे। परवर्तीकाल में ये लोग ही इस अंचल में सराक नाम से परिचित होने लगे।

पुरुलिया की पुराकीर्त्ति का प्रथम सोपान निर्मित हुआ था इन्हीं सराक या सुधी भूमिजों के द्वारा। उन्होंने इस अंचल के छड़रा, बलरामपुर, पाकबिड़रा, पाड़ा, देउलघाटा, तेलकूपी, बराकर आदि स्थानों में आश्रम बनाए। इन्हीं स्थानों में उन्होंने मन्दिर एवं पाषाणों को काटकर जैन तीर्थंकरों की मूर्त्तियाँ भी निर्मित की थीं, किन्तु अवहेलना और अनादर के कारण वे सभी मन्दिर और अमूल्य शिल्पकला अधिकांशतः नष्ट हो चुकी हैं। निष्ठुर महाकाल और धर्म-विकार ग्रस्त मनुष्यों के हाथों से बचकर जो कुछ अब भी बचे हुए हैं मात्र उन्हीं को लेकर भी आज पुरुलिया वासी गर्व कर सकते हैं।

पुरुलिया से चार मील उत्तर पूर्व में छड़रा नामक एक ग्राम है। पूरा गाँव एक नीची पहाड़ी पर अवस्थित है। अवश्य ही यह पहाड़ दूर से दिखाई नहीं देता। फिर भी गाँव में जाने से ही प्रतीत होगा कि गाँव के सभी घर पहाड़ के सख्त पत्थरों पर ही बने हुए हैं। सन् १६०१ में इस गाँव की कुल जनसंख्या थी १५३२। अब वर्त्तमान में यह संख्या चार हजार तक पहुँच गयी है।

इसी छड़रा ग्राम के वक्ष में छिपा हुआ है पुरुलिया की पुराकीर्त्ति का एक गौरवमय इतिहास। इसकी धरती के अन्दर है अनेक प्राचीन मूर्त्तिकला के निदर्शन।

छड़रा कभी जैनधर्म का केन्द्र था यह मानना होगा। इसी के समीप हैं झाँपड़ा, पाड़ा, केलाहि, जवड़रा आदि सराक प्रभावित ग्राम।

यहाँ सराक जैनों के सात पाषाण मन्दिर बनाए गए थे। बहुमूल्य पाषाणों से निर्मित मूर्त्तियों से इन मन्दिरों को सजाया गया था। मन्दिरों को देउल कहा जाता था। ये मन्दिर पाँच से नौ फुट लम्बे और दो से ढाई फुट ग्रेनाइट पत्थर से तैयार किए गए थे। दो पाषाणों के मिलन स्थल पर सिमेण्ट जातीय कोई पदार्थ का व्यवहार नहीं होता था। ये स्टोन कारपेन्टरी पद्धति से बनाए जाते थे। ऊँचाई में ये मन्दिर प्रायः तीस फुट होते थे। इस प्रकार के सात मन्दिरों में केवल एक मन्दिर अवहेलित अनादृत परित्यक्त मकान की भाँति आज बचा हुआ है। गत शताब्दी के अन्त में एक और मन्दिर था किन्तु इस शताब्दी के प्रारम्भ में ही वह नष्ट हो गया।

ये सब मूल्यवान पाषाणों से निर्मित मन्दिर काल के काले हाथों से बचकर और भी कई शताब्दियों तक टिके रहते यदि धर्मीय विकार ग्रस्त लोभी मनुष्यों का निष्ठुर आक्रमण इन पर नहीं हुआ होता। अब तो इन मन्दिरों के मूल्यवान पत्थर यहाँ के धनिक लोगों की बड़ी-बड़ी प्राचीरों के नीचे दबकर एकान्त में नीरव अश्रु विसर्जित कर रहे हैं। छड़रा ग्राम के धनिकों का ऐसा कोई मकान नहीं जहाँ जैन मन्दिरों के मूल्यवान पत्थर नहीं लगे हों। केवल छड़रा ग्राम के मनुष्य ही नहीं अन्य ग्राम के लोग भी मन्दिरों को तोड़कर पत्थर और मूर्त्तियाँ उठा ले गए हैं।

यहाँ की बड़ी-बड़ी जैन मूर्त्तियाँ आज कहाँ हैं कोई नहीं जानता। फिर भी मूर्त्तियों के पद्मासन अब भी टूटी-फूटी अवस्था में पड़े हुए दिखाई पड़ते हैं। एक विराट पद्मासन तो वर्तमान में धर्मराज ठाकुर के रूप में पूजा जाता है। इस पद्मासन पर नौ-दस फुट ऊँची जैन प्रतिमा थी इसका अनुमान तो सहज ही लगाया जा सकता है।

यहाँ की विशाल मूर्त्तियों का कोई सन्धान न मिलने पर भी छोटी-मोटी प्रायः शताधिक जैन तीर्थंकरों की मूर्त्तियाँ छिन्न-भिन्न अवस्था में यहाँ की जमीन में दब गयी हैं। महावीर की कुछ मूर्त्तियाँ शिव मन्दिर में, बासन्ती मन्दिर में, दुर्गा मन्दिर में, धर्म ठाकुर के मेले में स्थान प्राप्त कर अक्षत बच सकी हैं।

छड़रा में महावीर महादेव बन गए हैं, शिव के साथ नित्य महावीर की पूजा होती है। किसी-किसी स्थल पर वे ठीक शिवलिंग के समीप ही अवस्थित

है। मन्दिरों को तोड़कर ग्राम्य निवासी मकान बनाने के लिए जब मूल्यवान पत्थर ले जाते हैं तब मूर्त्तियों को टूटे हुए मन्दिरों में, तालाबों में या जंगलों में फेंक देते हैं। इन मूर्त्तियों का शिव मूर्त्ति से सादृश्य होने के कारण अल्प शिक्षित ग्रामीण इन्हें ले जाकर शिव मन्दिर में रख देते हैं एवं यह प्रचार करते हैं कि ये मूर्त्तियाँ विश्वकर्मा द्वारा निर्मित हैं। शिव ठाकुर यहाँ बाघ चर्म खोलकर दिगम्बर हो गए हैं।

छड़रा के बासन्ती मन्दिर में जो जैन मूर्त्ति रखी हुई है, उसकी पूजा

पाड़ा ग्राम का यह सुन्दर जैन मन्दिर
अब ध्वंशोमुख है
चित्र : युधिष्ठिर माजी

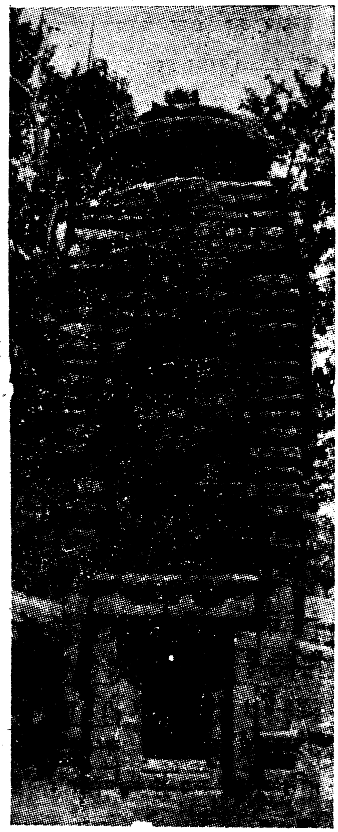

सात मन्दिरों में एकमात्र अवशिष्ट
छड़रा का सराक जैन मन्दिर
चित्र : अमल त्रिवेदी

नित्य नहीं होती फिर भी बासन्ती पूजा के दिन यह मूर्त्ति भी बेलपत्र एवं फूल से वंचित नहीं रहती। धर्म मेला के पास एक गृह में कुछ जैन मूर्त्तियों के कटे हुए सिर रखे हुए हैं। ग्रामीण इन्हें शिवमुण्ड कहते हैं। प्रतिदिन बेलपत्र एवं पुष्पों से इनकी पूजा होती है। महावीर का जो विराट पद्मासन वर्त्तमान में धर्मराज या धर्म ठाकुर के रूप में पूजा जाता है उसके समीप ही दो जैन मन्दिरों का ढाँचा (Miniature Temple) है। ये बहुत सख्त पाषण से बने हुए हैं अतः आज भी अक्षत हैं। ये छोटे मन्दिर एक ही पत्थर से निर्मित हैं। ये प्रायः दो फुट ऊँचे एवं छः से आठ इंच चौड़े हैं। इसी प्रकार का एक छोटा मन्दिर वराहभूम परगना के पवनपुर में भी पाया गया था। विगत शताब्दी के अन्त में किसी समय ये मिनी मन्दिर भारतीय म्युजियम में ले जाए गए थे।

पूंचा से २ मील पूर्व में एवं पुरुलिया से प्रायः २५ मील दक्षिण पूर्व में वागदा परगना के पाक विड़रा नामक स्थान में बहुत से प्राचीन जैन शिल्पकला के निदर्शन पाए गए हैं। पुरुलिया की विख्यात जैनमूर्त्ति यहीं है। यह जैनमूर्त्ति साढ़े सात फुट ऊँची एवं सख्त पाषाण से बनी हुई है। वर्तमान में यह मूर्त्ति महाकाल भैरव के नाम से पूजी जाती है। छड़रा में जिस तरह का पद्मासन धर्म ठाकुर के रूप में पूजा जाता है ठीक उसी प्रकार के पद्मासन पर यह मूर्त्ति प्रतिष्ठित है। मूर्त्ति की तुलना में पद्मासन बहुत छोटा है। इसके अतिरिक्त यहाँ और भी बहुत-सी छोटी-मोटी जैन मूर्त्तियाँ एवं ईंट से बने प्राचीन मन्दिरों के भग्नस्तूप हैं। यहाँ की शिल्पकला में बहुत से जीव जन्तुओं का निदर्शन पाया जाता है। इन जीव जन्तुओं में सिंह, साँड़, भेंड़ आदि उल्लेखनीय हैं।

जयपुर से प्रायः चार मील दक्षिण में कांसाई नदी के तट पर अवस्थित बोराम एक इतिहास प्रसिद्ध स्थान है। यहाँ तीन प्राचीन मन्दिरों के निदर्शन मिलते हैं। मन्दिर ईंट के बने हुए हैं। दक्षिण दिशा वाला मन्दिर सबसे बड़ा है। इस मन्दिर की उच्चता प्रायः साठ फुट है। गर्भ गृह नौ वर्गफुट है। अठारह इंच लम्बी, बारह इंच चौड़ी एवं मात्र दो इंच मोटी ईंट से मन्दिर अति सुन्दर रूप में बनाया गया है। ईंटें इतनी सुन्दर और निर्दोष हैं कि देखने पर लगेगा जैसे ये मशीन से बनायी गयी हैं।

अपने सुन्दर शिल्प के कारण ये मन्दिर सभी के मन को आकृष्ट करते हैं। मन्दिर की दीवारों का अद्वितीय शिल्प देखकर मन मुग्ध हो जाता है। एक समय यही मन्दिर पुराकीर्त्ति की एक अमूल्य सम्पत्ति के रूप में पुरुलिया की

धरती पर खड़ा था। किन्तु उस समय हमारे देश के मनुष्य शिल्प कला का मूल्य नहीं समझते थे। फलतः अवहेलना और अनादर के कारण मन्दिर के ऊपरी भाग का बहुत-सा अंश नष्ट हो गया है। अब भी इन सब मन्दिरों का संस्कार कर सुरक्षित रूप में रखने से इस अमूल्य सम्पत्ति को और भी कुछ दिन बचा रखना सम्भव हो सकेगा।

ये मन्दिर निस्सन्देह जैन मन्दिर हैं। मन्दिरों के पास एक टूटे हुए शिवमन्दिर में एवं कुएँ में बहुत-सी टूटी-फूटी जैन मूर्त्तियों के सन्धान मिले थे। सम्भवतः इन्हीं सब जैन मूर्त्तियों को मन्दिर से हटाकर नष्ट कर फेंक दिया गया है। एक समय पुरुलिया अंचल में जैन मन्दिरों को हिन्दू देव देवियों के मन्दिरों में रूपान्तरित करने का कार्य बहुत जोर से चल रहा था। उस समय अनेक जैन मूर्त्तियों को विकृत कर काली, महाकाली, भैरव के नाम से रूपान्तरित कर दिया गया था। इन्हीं सब अपकर्मों के, काले कारनामों की छाप इन मन्दिरों पर पड़ी थी। कुछ हिन्दू मूर्त्तियों को भी इन जैन मन्दिरों की दीवालों पर बैठाकर इन्हें हिन्दू देव-देवियों के मन्दिर रूप में परिवर्त्तित करने की अपचेष्टाएँ की गयी थीं। फिर भी यह समझने में भूल नहीं होती कि ये मन्दिर जैन मन्दिर हैं। अधिकांश जैन मन्दिरों की भाँति इनके द्वार पूर्वमुखी हैं। इसीलिए मि० ई० टी० डाल्टन साहब ने स्पष्टतया कहा है कि ये मन्दिर जैन मन्दिर हैं एवं सराकों द्वारा निर्मित हैं।

पुरुलिया शहर से तेरह मील दक्षिण में पलमा नामक एक ग्राम है। यहाँ के एक शिवमन्दिर के प्रवेश द्वार पर एक विशाल मस्तक विहीन जैन मूर्त्ति दिखायी पड़ती है। इस तीर्थंकर मूर्त्ति की ऊँचाई करीब छः फुट है। मूर्त्ति का मस्तक होने पर इसकी ऊँचाई होती प्रायः नौ फुट। मूर्त्ति खूब सख्त पाषाण से नहीं बनायी गयी थी। अस्तु जीर्ण होती जा रही है। इसके अतिरिक्त मन्दिर की दीवाल पर भी दो छोटे आकार की जैन तीर्थंकरों की मूर्त्तियाँ हैं। सम्भवतः इन दो मूर्त्तियों में एक ऋषभनाथ की है। इसके अलावा जैन मूर्त्तियों के दोनों पार्श्व में चौबीस तीर्थंकरों की मूर्त्तियाँ भी हैं।

पुरुलिया जिले की जैन शिल्प कला पर एक काल में प्रचण्ड आक्रमण हुआ था इसमें कोई सन्देह नहीं है। अधिकांश जैन मूर्त्तियों को शिवपुकुर तालाब में फेंक दिया गया था। परवर्त्तीकाल में तालाब से निकालकर इन मूर्त्तियों को स्थापित किया गया दीवारों पर। पाड़ा थाना के पाड़ा ग्राम में भी यही दृश्य देखा जाता है। यहाँ रघुनाथजी के मन्दिर के भीतरी भाग में तीर्थंकर की एक प्राचीन मूर्त्ति है। मूर्त्ति समीपवर्ती ग्राम की ही है। यह

मूर्त्ति एक तालाब में मिली थी। डेढ़ फुट ऊँची यह मूर्त्ति भगवान ऋषभनाथ की है। मूल मूर्त्ति के दोनों पार्श्व में दो-दो करके चार तीर्थंकरों की दण्डायमान मूर्त्तियाँ हैं। एक समय मूर्त्ति का कुछ रूपान्तर कर इसे हनुमान मूर्त्ति बनाने की हास्यप्रद प्रचेष्टा की गयी थी। इसके अतिरिक्त पाड़ा में सराकों द्वारा निर्मित एक जैन मन्दिर भी है। आकार में यह मन्दिर छड़रा के मन्दिर की अपेक्षा बहुत बड़ा है। यह भी सम्भवतः ग्रेनाइट पत्थर से ही बनाया गया है। प्राचीरें बड़ी अलंकृत थीं किन्तु वर्तमान में पत्थर पर खुदाई किया हुआ अंश नष्ट हो गया है। पाड़ा का यह सुन्दर मन्दिर अब ध्वंशोमुख है। क्या सरकार इन अमूल्य पुराकीर्त्ति की सुरक्षा का भार ग्रहण नहीं कर सकती ?

नांगटी में भी टूटी-फूटी अवस्था में स्तूपीकृत जैन मूर्त्तियाँ पायी जाती हैं। यहाँ की सर्वापेक्षा बड़ी मूर्त्ति शायद ऋषभनाथ की है। इस मूर्त्ति की चौड़ाई प्रायः २६″ और ऊँचाई ५५″ है। मूल मूर्त्ति एक पद्मफूल पर दण्डायमान है। मूर्त्ति के दोनों पार्श्व में चौबीस तीर्थंकरों की मूर्त्तियाँ पद्म पर दण्डायमान हैं। इस मूर्त्ति के मस्तक के दोनों ओर उड्डीयमान गन्धर्व मूर्त्ति है। दो लाइन में तीर्थंकरों की मूर्त्ति के नीचे दो नारियाँ प्रणाम करने की भंगिमा में उपवेशित हैं। यहाँ की दूसरी मूर्त्ति ४६″ लम्बी और २३″ चौड़े पाषाण पर उत्कीर्ण है। मूल जैन मूर्त्तियाँ ऊँचाई में प्रायः ३०½″ है। इस मूर्त्ति के दोनों पार्श्व में दो दण्डायमान नारी मूर्त्तियाँ हैं। इन नारियों के हाथ में चंवर हैं। इनके अतिरिक्त एक और ऋषभनाथ की मूर्त्ति भी यहाँ है। किन्तु मूर्त्ति का अंग-भंग हो गया है। ये सब मूर्त्तियाँ मूर्त्ति कला का अद्वितीय उदाहरण है। उस समय के जैन सराकों ने जिस असाधारण शिल्प नैपुण्य का परिचय दिया है वह तो देखने से ही ज्ञात हो सकता है। न जाने कितने समय से यह सुन्दर शिल्प कला अनादृत एवं अवहेलित अवस्था में रहती आयी है कोई कह नहीं सकता। इतना ही नहीं आगे भी कबतक यह इसी प्रकार नष्ट होती रहेगी यह भी अज्ञात है। किन्तु शिल्पकला की यह क्षति केवल जैन सराकों की ही क्षति नहीं पूर्ण देश की क्षति है।

पुरुलिया के सीमान्तवर्ती अंचल में महादेव बेड़ा एक सुन्दर जैन पुराक्षेत्र है। यहाँ धनबाद जिले के सराकों ने एक आधुनिक मन्दिर भी निर्मित करवाया है। यहाँ की सबसे बड़ी मूर्त्ति दीवाल के मध्य उत्कीर्ण है। मूर्त्ति की ऊँचाई ४ फुट ६ ईन्च और चौड़ाई प्रायः २ फुट है। पाकबिड़रा की मूर्त्ति की भाँति इस मूर्त्ति का पद्मासन भी बहुत छोटा है। इस मूर्त्ति पर पीछे की

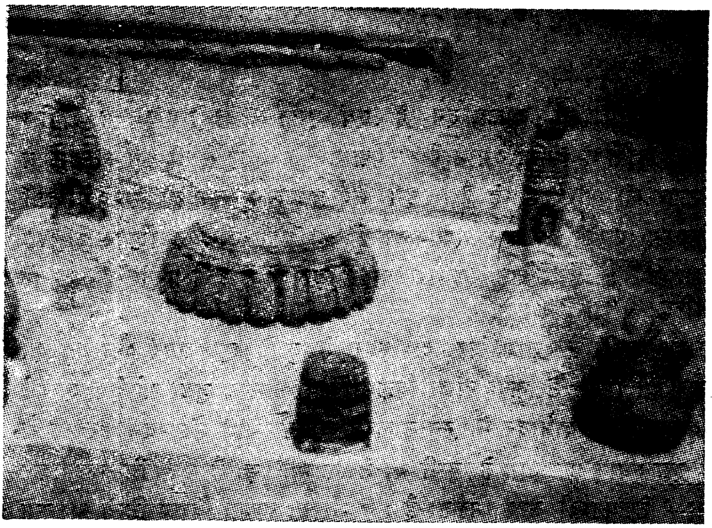

सराक जैन मूर्त्ति का यह पद्मासन अब धर्मराज के रूप में पूजा जाता है

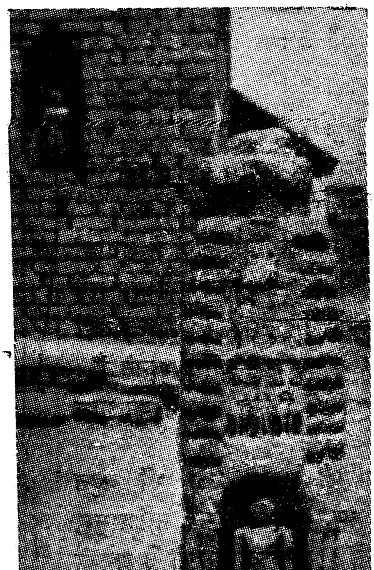

सराक जैन मन्दिर का मॉडल

क्षय होती हुई एक सराक जैन मूर्त्ति

चित्र : अमल त्रिवेदी

ओर सप्तमुखी सर्प का आच्छादन है एवं मूर्त्ति के दोनों पार्श्व में चौबीस तीर्थंकरों की मूर्त्तियाँ दण्डायमान है। पद्मासन के नीचे से दो सर्प लीलायित भंगी में ऊपर की ओर उठ रहे हैं। इन सर्प द्वय के मुखपर दो नारी मूर्त्तियाँ हाथ जोड़कर खड़ी हैं। इन सर्प कन्याओं को बहुत-सी जैन शिल्प कलाओं में देखा जाता है। ये जिस प्रकार पाकबिड़रा में है उसी प्रकार बराकर के पाषाण मन्दिर में भी हैं।

दामोदर नदी के तीर पर अवस्थित तेलकूपी एक समय जैन धर्म का प्रचार-स्थल था। यह तेलकूपी राजा विक्रमादित्य के साथ जुड़ी हुई है। शायद राजा विक्रमादित्य दामोदर में स्नान करने के पूर्व यहाँ तैलमर्दन करवाते थे इसीलिए इस स्थान का नाम तेलकूपी या तेलकाम्पी पड़ा है। कवि सन्ध्याकर की रचना में तेलकाम्पी नाम मिलता है। सम्भवतः राजा विक्रमादित्य पातकूम राज्य के विख्यात जमींदार थे। सुवर्ण रेखा के तटपर दियापुर दालमी में राजा विक्रमादित्य का दुर्ग था।

तेलकूपी का मन्दिर वर्तमान में डी० भी० सी० के बाँध के जलतल में है। छड़रा के मन्दिर की भाँति निर्मित हुआ था यह मन्दिर भी। मन्दिर की मूर्ति निस्सन्देह सराक जैनों द्वारा बनायी गयी तीर्थंकर मूर्त्ति है। पाकबिड़रा की भाँति यहाँ की जैन मूर्त्ति भी विख्यात हिन्दू देवता भैरवनाथ के रूप में परिवर्तित कर दी गयी है। वारूनी तिथि को आगे यहाँ बहुत बड़ा मेला लगता था। जिले के प्राचीन मेलों में इस मेले का द्वितीय स्थान था।

स्थानीय जनसाधारण की धारणा है कि यह मन्दिर विश्वकर्मा ने बनाया है। यह भी कहा जाता है कि विश्वकर्मा इसी राह से होकर पुरीधाम गये थे। अपने यात्रा पथ पर उन्होंने यह मन्दिर निर्माण किया था। किन्तु यहाँ के जैन सराक विश्वकर्मा-से दक्ष कारीगर हैं यह बहुत कम लोग जानते हैं। आधुनिक पण्डितगण भी जैनों की चर्चा करते हैं किन्तु सराकों का नाम भूलकर भी उच्चारण नहीं करते।

यहाँ मूल जैन मूर्त्तियों के अतिरिक्त हिन्दू देवी-देवताओं की भी बहुत सी मूर्त्तियाँ पायी जाती हैं। इन मूर्त्तियों में विष्णु, लक्ष्मी, दुर्गा, महिषासुर, कामदेव, रति आदि की मूर्त्तियाँ उल्लेख योग्य हैं। इन सब कारणों से अनेकों तेलकूपी की शिल्प कला में हिन्दू संस्कृति की छाप देख पाए हैं। किन्तु ये हिन्दू देवी देवताओं की मूर्त्तियाँ परवर्ती काल में बनी हैं। यहाँ भी जैन मन्दिरों में हिन्दू देवी देवताओं की मूर्त्तियाँ घुसाकर जैन तथा सराक संस्कृति के विनाश की अपचेष्टाएँ की गयी थीं। सराक लोगों ने यहाँ एक जैन नगर का भी निर्माण किया था। तेलकूपी प्राचीन काल में एक सुरक्षित

शिवासन पर प्रतिष्ठित सराक जैन मूर्त्ति जिसकी शिव के साथ नित्य पूजा होती है

नित्य तो नहीं किन्तु वासन्ती पूजा के समय इस जैन मूर्त्ति की भी पूजा की जाती है

चित्र : अमल त्रिवेदी

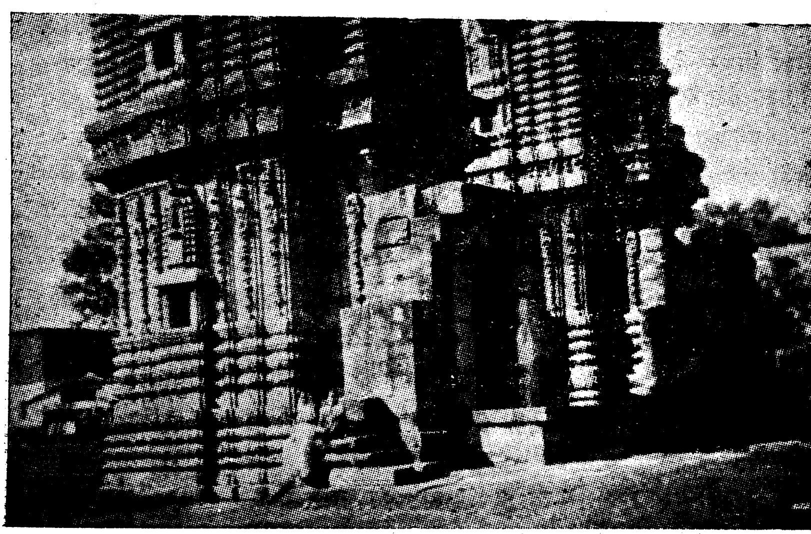

पुरुलिया, वर्द्धमान और धनबाद जिला के सीमान्तवर्त्ती अंचल में अवस्थित जैन मन्दिर का सम्मुख भाग। बराकर के ये सब जैन मन्दिर सुरक्षित रहे हैं
चित्र : युधिष्ठिर माजी

नगर और शिल्प केन्द्र था। तामलुक से घाटाल, छातना, रघुनाथपुर होते हुए एक रास्ता तेलकूपी पर्यन्त गया है। बाद में यह रास्ता दामोदर पार कर राजगीर तक विस्तृत था। इस रास्ते से पटना भी जाया जाता था। वर्षा के दिनों में तेलकूपी इस पथ की एक बहुत बड़ी सराय थी। इसी कारण तेलकूपी में तीर्थंकरों की मूर्त्तियों के पास हिन्दू देवी-देवताओं का प्रवेश बिना किसी बाधा के हो सका था।

कंसाई नदी के तट पर बुधपुर एक प्राचीन ग्राम है। गाँव के उत्तर की ओर चार सराक जैन मन्दिरों के ध्वंशावशेष देखे जाते हैं। अन्य स्थानों की तरह यहाँ भी कुछ प्राचीन सराक जैन मन्दिरों को हिन्दू मन्दिर में रूपान्तरित किया गया है। यहाँ पाषाण निर्मित कुछ स्तम्भ एवं अन्यान्य शिल्पकला के निदर्शन भी पाए जाते हैं। छड़रा के प्रस्तर शिल्पकला से इनका कुछ साम्य है। यहाँ भी तीर्थंकर महावीर का प्रभाव कालक्रम से रूपान्तरित होकर महादेव के प्रभाव में परिणत हो गया है। जिले का सबसे प्राचीन सबसे बड़ा गाजन मेला बुधपुर ग्राम में अनुष्ठित होता है। पहले चड़क पूजा के समय बुधपुर मेला का बड़ा आकर्षण था। इसमें किसी एक भक्त के पेट से पीठ तक आरपार छेद करके उसमें रस्सी डालकर एक ऊँचे बाँस पर लटका कर घुमाया जाता था। मेले का दूसरा आकर्षण था श्यामा पक्षी। हजार-हजार श्यामा पक्षियों को राजमहल की पहाड़ियों से पकड़-पकड़ कर यहाँ लाकर बेचा जाता था। उन पक्षियों के बच्चों को खरीदने के लिए समस्त देश के पक्षी व्यवसायी बुधपुर के मेले में इकट्ठे होते थे।

पुरुलिया, वर्धमान और धनबाद (बिहार) इन तीन जिलों के सीमान्त-वर्ती अंचल पर बराकर है। यहाँ चार सराक जैन मन्दिर खब सुन्दर एवं सुरक्षित भाव से बराकर नदी के किनारे अवस्थित हैं। वर्त्तमान में मंदिरों के गर्भगृह में शिवलिंग प्रतिष्ठित हो गए हैं। कब और किसके द्वारा इन शिवलिंगों की प्रतिष्ठा हुई यह कहना कठिन है। फिर भी कुछ किम्बदन्तियाँ एवं कुछ दलील पत्रों में देखा जाता है कि १४५६ में किसी समय हरिप्रिया नामक किसी राजरानी ने इन मन्दिरों में शिवलिंगों की प्रतिष्ठाएँ करवायी थीं।

छड़रा के जैन मन्दिरों में सराक मन्दिरों के जो मॉडल (Miniature Temple) पाए गए थे उनसे बराकर के मन्दिरों का साम्य है। इन मन्दिरों की दीवालों पर किसी हिन्दू देव-देवियों की मूर्त्ति नहीं है। उस समय की जैन शिल्पकला की मूल विशेषता थी लीलायित सर्प के मुख में नारी। बराकर के इन सब मन्दिरों की दीवालों पर ऐसी ही सर्प कन्याएँ देखी जाती हैं। इसके अतिरिक्त मन्दिर जिन मूल्यवान पत्थरों से निर्मित हैं शिवलिंग

उनकी अपेक्षा बहुत निकृष्ट पत्थरों से बनाए गए हैं। इससे ही प्रमाणित होता है कि ये सब बाद में प्रतिष्ठित हुई हैं। पहले इन मन्दिरों में सराकों द्वारा बनवायी गयी जैन मूर्त्तियाँ थीं। बाद में इन मूर्त्तियों को नष्ट कर दिया गया।

बराकर के चतुर्थ मन्दिर के प्रांगण में कुछ टूटी-फूटी जैन मूर्त्तियों के सन्धान पाए गए हैं। किन्तु अक्षत कोई प्रतिमा भी नहीं है। मूर्त्तियों के नीचले अंश तोड़कर फेंक दिए गए हैं। फिर भी इतना तो निश्चित ही है कि किसी समय ये सब मूर्त्तियाँ मन्दिर के गर्भगृह में प्रतिष्ठित थीं।

सराकगण अतीत में शिल्पी जाति के थे। वे विख्यात मूर्त्तिकार थे। इस जिले के इतिहास में सराक शिल्पियों का बहुत बड़ा प्रभाव था। यह तो मैं पहले ही कह आया हूँ कि यहाँ महावीर महादेव हो गए हैं। समग्र बंगाल जब तान्त्रिकों के प्रभाव से आच्छन्न होकर काली एवं दुर्गा के प्रति आकृष्ट था तब पुरुलिया के मनुष्यों ने सराक जैनों के प्रभाव से महावीर को महादेव बनाकर शैव धर्म अंगीकार कर लिया। यहाँ पशु बलि की मात्रा भी कम हो गयी थी। यद्यपि महाकाल भैरव के सम्मुख पशुबलि देने की प्रथा थी किन्तु किसी भी शिवमन्दिर में पशुबलि नहीं दी जाती है। पुरुलिया जिला में ऐसे बहुत से सराक प्रभावित ग्राम हैं जहाँ काली और दुर्गा की पूजा में भी पशुबलि नहीं होती। इसीलिए कवि कंकण चण्डी में मुकुन्दराम चक्रवर्ती जहाँ लिखते हैं—

आश्विने अम्बिका पूजा करे जग जने।
छागल महिष मेष, दिया बलि दाने॥

वहाँ पुरुलिया अंचल के झुमुरगान गाने वाले अपने झुमुरगान में लिखते हैं—

मातृ भावे मिलि, भरिया अंजुलि
रक्त चन्दन जवाय रे।
आरो जय दुर्गा बलि दिव पुष्पांजलि—
दिवो रांगा जवा रांगा पाय रे!

पुरुलिया अंचल में इस अहिंसक भावधारा की सृष्टि सराक जैन संस्कृति के प्रभाव से ही हुई है।

सराकगण पुरुलिया जिले में पुराकीर्त्ति के जो निदर्शन रख गए हैं उन सब पुराकीर्त्तियों के अनुकरण में परवर्तीकाल में बहुत से मन्दिरों का निर्माण हुआ। उनके शिल्पज्ञान ने वर्तमान युग के बहुत से शिल्पी कारीगरों को सूक्ष्म निपुणता सिखायी है। सराक जैन मन्दिर में या तीर्थंकरों की मूर्त्ति के पास जो सर्प कन्या या नाग कन्या का निदर्शन पाया जाता है उसकी लीलायित भंगिमा लोक शिल्प में रूपान्तरित हो गयी है। ग्रामांचल की बहुत-सी दीवारों पर इसी भाँति की नाग कन्याएँ देखी जाती हैं। इसके अतिरिक्त इस अंचल के अतीत इतिहास को जानने का एकमात्र उपादान है सराक जैनों के यही सब पुराकीर्त्ति के निदर्शन। सराकों का मूर्त्ति शिल्प ही इस अंचल की सबसे प्राचीन ऐतिहासिक सम्पदा है। हर मूल्य पर इस सम्पदा की रक्षा करना उचित है।

श्रीपाल

[पूर्वानुवृत्ति]

पंचम अंक

प्रथम दृश्य

[कौशाम्बी । अन्तःपुर । रानी कमलप्रभा का कक्ष । कमलप्रभा और मैना सुन्दरी]

कमलप्रभा : कितने दिन हो गए श्रीपाल को यहाँ से गए ? न वह स्वयं लौटकर आया न उसका कोई पत्र मिला, न कोई सूचना । अब तो मन उससे मिलने को एकदम व्याकुल है । बिना मिले चैन नहीं । मुझे तो उसके बिना यह जीवन भी भार स्वरूप ही लग रहा है । बिना उसके इस जीवन का मूल्य ही क्या है ?

मैनासुन्दरी : माँ, आप इस प्रकार दुःखी क्यों हो रही हैं ? सिद्धचक्र के प्रताप से सब कुछ अच्छा ही होगा । मुझे पूर्ण विश्वास है आपके पुत्र सकुशल ही घर लौटेंगे । जो कुछ कष्ट वर्तमान में हम प्राप्त कर रहे हैं अवश्य ही वह हमारे पूर्व जन्म कृत अशुभ कर्मों के उदय से मिल रहा है । किन्तु अब मुझे ऐसी प्रतीति हो रही है कि हमारे दुःख के दिनों का अन्त आ गया है । आज प्रातः पूजा के समय मुझे जो अपूर्व आनन्द आया, भाव आया वह अवर्णनीय है । अब तक मेरे हृदय पर उसका प्रभाव है । मेरी रोमावलि अब तक पुलकित हो रही है, बायीं आँख भी फड़क रही है । इससे मेरा मन कह रहा है आज कोई शुभ घटना अवश्य ही घटित होगी । संभव है वे आज आ जाएँ या हमें उनका कोई आनन्दप्रद समाचार ही मिले ।

कमलप्रभा : बेटी, ईश्वर करे तेरी बात सत्य प्रमाणित हो । यह तो मैंने अनेक बार देखा है तू जो कहती है वह सत्य ही होता है । तेरी जीभ में अमृत है अमृत । मुझे तेरी बात पर पूर्ण विश्वास है । तेरी बात सिद्ध पुरुषों के वचनों की भाँति कभी व्यर्थ नहीं होती ।

[तभी बाहर से श्रीपाल बोल उठते हैं]

श्रीपाल : माँ !

कमलप्रभा : अरे ! यह तो श्रीपाल की आवाज है । देखूँ कौन है बाहर ?

[उठकर दरवाजा खोलती है]

[श्रीपाल माँ को देखते ही चरण स्पर्श करते हैं]

श्रीपाल : मैं आ गया हूँ माँ ।

[कमलप्रभा उन्हें छाती से लगाकर केशों को सहलाते हुए]

कमलप्रभा : बेटा, बड़ी उम्र है तेरी । अभी-अभी हम तेरी ही बातें कर रही थीं । मैना कह रही थी आज ही तुम आ सकते हो, नहीं तो तुम्हारा समाचार मिल सकता है ।

[श्रीपाल मैना की ओर देखते हैं । मैना प्रथम सास का बाद में श्रीपाल का चरण स्पर्श करती है]

कमलप्रभा : कहो बेटा, विदेश में तुम कुशल तो थे न ? कोई कष्ट तो नहीं उठाना पड़ा तुम्हें ?

श्रीपाल : माँ, तुम्हारे आशीर्वाद एवं सिद्धचक्र के प्रताप से जो भी विघ्न आए दूर होते रहे । या यों कहो माँ, विघ्नों का आगमन सदैव कल्याण के लिए ही होता रहा । विदेश में मैंने प्रभूत धन उपार्जन करने के साथ-साथ कई राज-कन्याओं से विवाह भी किया है । कौंकण आदि देशों का राज्य भी प्राप्त किया है । माँ, यहाँ आते-आते भी कई राज्य विजय कर लिए हैं । अब एक विशाल सैन्यदल मेरे अधीन है ।

कमलप्रभा : यह सब सुनकर तो बेटा मन फूल-फूल उठा है । कितनी भाग्यशाली हूँ मैं जो तेरे जैसा पुत्र पाया । अब तो बस यही अभिलाषा है तुम अपना पितृ राज्य भी जयकर पिता के सिंहासन पर बैठो । आज मेरे सुखों का पारावार नहीं है ।.... पर बेटा यह सब हमारी इस सुलक्षणा बहू के कारण ही हुआ है । बड़ी सुशील और सेवाशील है यह । बहुत सेवा की इसने मेरी, तेरी अनुपस्थिति में ।

श्रीपाल : वह तो सब मैं जानता हूँ माँ । इसका ऋण तो कभी नहीं चुकाया जा सकता । यदि यह मुझे गुरुदेव के पास न ले जाती, सिद्धचक्र की आराधना कर रोग मुक्त नहीं करती तो अभी तक मैं कुष्ठियों का राजा बना खच्चरों पर ही घूमता रहता । बड़े सौभाग्य से ही इसे प्राप्त किया है माँ ।

कमलप्रभा : [शरमाती हुई मैना की ओर देखकर] बिल्कुल ठीक कह रहा है मैना मेरा लड़का । [श्रीपाल से] और हाँ श्रीपाल, तुम्हारे पिता के वृद्ध मन्त्री मतिसागर भी यहाँ आए हुए हैं । ऐसा स्वामीभक्त व्यक्ति मैंने कहीं नहीं देखा ।

श्रीपाल : माँ, तुम्हारे दर्शनों को आतुर अपनी सेना को मैं बहुत पीछे छोड़ आया हूँ। वह भी इधर ही आती होगी। आते ही युद्ध के लिए प्रस्थान करना है। चलो अच्छा हुआ ठीक समय पर मतिसागर भी आ गए। बड़ी मदद मिल जाएगी मुझे उनसे चम्पा विजय करने में। चम्पा जयकर मैं पूर्णकाम बन जाऊँगा माँ।

कमलप्रभा : अरे, बातों ही बातों में मुझे तो इतना भी ध्यान नहीं रहा कि दूर से चलकर तू आ रहा है अवश्य भूखा-प्यासा होगा। बेटी मैना, श्रीपाल के खाने का शीघ्र प्रबन्ध करो।

मैनासुन्दरी : अभी जाकर सब करती हूँ।

द्वितीय दृश्य

[अन्तःपुर। श्रीपाल, पुण्यपाल, कमलप्रभा, मैना सुन्दरी आदि बैठे हैं। सम्मुख खड़े हैं मतिसागर]

मतिसागर : कुमार, एक बहुत बड़ी सेना का संगठन हो गया है। राजा पुण्यपाल भी तो अपनी सेना सहित हमलोगों के साथ ही चल रहे हैं। अब हम चम्पा आक्रमण का दिन निश्चित करें। मैंने ज्योतिषियों से पूछा। उन्होंने आगामी शुक्ला त्रयोदशी का दिन अत्यन्त शुभ बताया है। उस दिन युद्ध यात्रा करने से विजय श्री अवश्य ही हमारे हाथ लगेगी।

पुण्यपाल : मन्त्रीवर ठीक ही कह रहे हैं कुमार।

श्रीपाल : मेरा भी यही अभिमत है। किन्तु चम्पा आक्रमण के पूर्व मालवराज को कुछ शिक्षा देना चाहता हूँ। उन्होंने अहंकारवश केवल धर्म का ही अपमान नहीं किया सत्य बोलने के कारण मैना के जीवन को भी दुःखमय बनाने में कोई कसर नहीं रखी। मालवपति ने क्रोधावेश में जो अनुचित कार्य किया वह उन्हें समझा देना चाहता हूँ। किन्तु इतना करके भी क्या वे मैना का जीवन दुःखमय कर सके ? उसके भाग्य को परिवर्तित कर सके ?

पुण्यपाल : तुम अभी इस सम्बन्ध में क्या करना चाहते हो ?

श्रीपाल : यह मैं मैना से ही पूछता हूँ। वह जैसा कहेगी वैसा ही करूँगा।

मैनासुन्दरी : मैं इस विषय में क्या बोल सकती हूँ आर्यपुत्र ? आप बुद्धिविवेक सम्पन्न हैं। अतः आप जो कुछ करेंगे वह उपयुक्त ही होगा।

श्रीपाल : फिर भी कुछ कहो तो। मैं तुमसे ही कुछ सुनना चाहता हूँ।

मैनासुन्दरी : आर्यपुत्र, आप यदि मेरे मुख से ही कुछ सुनना चाहते हैं तो— उनका अभिमान दूर करना हमारा आवश्यक कर्त्तव्य है। फिर भी उन्हें कुछ क्षति पहुँचाना हमारे लिए उचित नहीं होगा। उन्होंने क्रोधान्ध होकर मुझे कुष्ठरोगाक्रान्त व्यक्ति के हाथों सौंपा था, किन्तु यदि वे ऐसा नहीं करते तो आज मैं जिस सौभाग्य की अधिकारिणी बनी हूँ वह हो सकती थी?

कमलप्रभा : ऐसी पुत्रवधू को पाकर मैं स्वयं को धन्य समझ रही हूँ श्रीपाल। मेरा तो कहना है तुम मालवपति को यह कहलवा दो कि वे या तो कंधे पर कुल्हाड़ा रखकर तुम्हारे सम्मुख आएँ नहीं तो युद्ध के लिए प्रस्तुत हो जाएँ। मैं सोचती हूँ हमारी इस सम्मिलित सेना के साथ युद्ध करने का वे साहस नहीं करेंगे। अतः वे तुम्हारे शिविर में उसी रूप में आएँगे, और "मैं निर्धन को धनी, दरिद्र को राजा बना सकता हूँ" यह कहना भूल जाएँगे। उनका अभिमान तो इससे चूर होगा ही अन्य भी इससे शिक्षा पाएँगे।

मतिसागर : महारानी ठीक ही कहती हैं।

श्रीपाल : तुम्हारी क्या राय है मैना?

मैनासुन्दरी : माँ ने जो कुछ कहा है वह नितान्त युक्ति संगत है। इससे मेरे पिताजी का कल्याण ही होगा।

श्रीपाल : तब ठीक है। [ताली बजाते हैं, द्वार-रक्षक आता है] सन्धि विग्राहिक मतिमन्द को यहाँ उपस्थित करो।

द्वार-रक्षक : जो आज्ञा।

[द्वार-रक्षक चला जाता है। सन्धि विग्राहिक आता है]

श्रीपाल : मतिमन्द, तुम्हें आज ही उज्जयिनी जाना होगा। और उज्जयिनी राज को यह सन्देश देना होगा—"या तो वे कन्धे पर कुल्हाड़ा लेकर चम्पा राजकुमार के शिविर में आएँ या फिर युद्ध के लिए प्रस्तुत हो जाएँ।

[मतिसागर की ओर देखकर] मन्त्रीवर, शुक्ला त्रयोदशी के दिन हमारी सेना को मालव की ओर प्रयाण करें।

मतिसागर : जो आज्ञा कुमार।

[मन्त्री बाहर जाते हैं। रण भेरी सुनाई पड़ती है] [क्रमशः

जीव

[पूर्वानुवृत्ति]

—हरिसत्य भट्टाचार्य

जैनों का उत्तर यह है कि, हमारी जैन दृष्टि में आत्मा कथंचित् सावयव अथवा कार्य हैं; वह पूर्ण रूप से सावयव और कार्य पदार्थ है ऐसा भी नहीं। यह नहीं कहा जा सकता कि, जिस प्रकार घड़ा समान जातीय अवयवों से बनता है उसी प्रकार आत्मा भी सजातीय कारणों से निष्पन्न होती है। आप आत्मा को कार्य कहें तो कह सकते हैं, परन्तु 'कार्य' शब्द का अर्थ आप क्या करते हैं? पूर्व आकार का परित्याग करके दूसरे आकार में परिणमित होना द्रव्य का कार्यत्व है। भिन्न-भिन्न पर्याय-परिणति ही आत्मा का कार्यत्व है। इस दृष्टि से आत्मा कथंचित् अनित्य भी है। एवं एक के पश्चात् एक पर्याय परिणत होने के कारण द्रव्यतः आत्मा अपरिवर्तित भी है। अतएव हम कहते हैं कि, आत्मा यद्यपि सावयव और कार्य है तथापि वह अविच्छिन्न, अविभाग और नित्य भी है।

आत्मा के शरीरपरिमाणत्व के विषय में नैयायिक कहते हैं कि, जीव को स्वदेह परिमाण मानोगे तो उसे एक मूर्त पदार्थ मानना पड़ेगा। अब यदि आत्मा मूर्त पदार्थ हो तो शरीर में उसका अनुप्रवेश असंभव हो जायगा। एक मूर्त पदार्थ में अन्य मूर्त पदार्थ किस प्रकार प्रवेश कर सकता है? फिर तो आपको शरीर को निरात्मक ही मानना पड़ेगा।

एक और बात भी है। यदि आत्मा देह परिमाण हो तो बाल शरीर के पश्चात् युवक शरीर के रूप में किस प्रकार परिणमित हो सकेगा? यदि आप कहें कि आत्मा बाल-शरीर-परिमाण का त्याग करके युवक-शरीर-परिमाण ग्रहण करता है तो शरीर के समान आत्मा भी अनित्य हो जायेगा। और यदि यह कहा जाय कि बालक-शरीर-परिमाण का त्याग किए बिना ही आत्मा युवा शरीर परिमाण में परिणत हो जाता है तो एक असम्भव व्यापार ही कहना पड़ेगा, क्योंकि एक परिमाण का त्याग किए बिना अन्य परिमाण किस प्रकार ग्रहण किया जा सकता है? अन्ततोगत्वा न्यायाचार्य कहते हैं कि, जीव तनुपरिमाण हो तो शरीर का एकाध अंश खण्डित होने पर आत्मा का भी किसी अंश में खण्डित होना मानना पड़ेगा।

जैन दार्शनिक इस का उत्तर देते हैं: 'मूर्त' के अर्थ क्या? यदि 'मूर्त' का अर्थ यह किया जाय कि आत्मा सब पदार्थों में अनुप्रविष्ट नहीं है, केवल

स्वेदह-परिमाण ही है, तो जैन सिद्धान्त को इससे विरोध न होगा, परन्तु यदि आप मूर्त शब्द का अर्थ रूपादिमान करें तो फिर हमें उसका विरोध करना पड़ेगा। आत्मा के असर्वगत अर्थात् स्वदेह परिमाण होने से, उसका रूपवान मूर्त होना नियमेन आवश्यक नहीं है। मन असर्वगत है, परन्तु इससे उसे मूर्त पदार्थ *नहीं माना जाता। आत्मा मूर्त पदार्थ नहीं है।* जिस प्रकार शरीर में मन प्रविष्ट होता है उसी प्रकार आत्मा का प्रवेश भी समझना चाहिये। जैन कहते हैं कि, भस्मादि पदार्थों में जल आदि मूर्त पदार्थों का प्रवेश होना संभव है तो शरीर में अमूर्त आत्मा का अनुप्रवेश असंभव कैसे हो सकता है ? आत्मा युवक-शरीर-परिमाण ग्रहण करने के समय बाल-शरीर-परिमाण का त्याग करती है, यह बात मानी जा सकती है, इसमें कुछ असंगति नहीं है। सांप अपने छोटे से फन को फैलाकर बड़ा बना देता है। उसी प्रकार आत्मा भी संकोच-विस्तार-गुण के प्रताप से पृथक्-पृथक् समयों में पृथक्-पृथक् देहपरिमाण धारण कर सकती है। विभिन्न अवस्था अथवा पर्याय देखकर आत्मा को परिवर्तनशील कहें तो कह सकते हैं, और इसी से आत्मा अनित्य भी है। द्रव्य से इससे विपरीत ही बात कहनी होती है। अर्थात् द्रव्य से आत्मा अपरिवर्तित और नित्य है। शरीर-खंडन के बारे में नैयायिक जो आपत्ति लेते हैं उसके उत्तर में जैन कहते हैं कि शरीर खंडित होने से आत्मा खंडित नहीं होती, खंडित शरीरांश में आत्मा का प्रदेश विस्तार पाता है। खंडित शरीरांश में एक हद तक आत्मा का अस्तित्व न मानें तो उसमें (खंडित शरीरांश में) जो कम्पन देखा जाता है उसका कोई अन्य कारण नहीं मिलता। खंडित अंश में कोई पृथक आत्मा तो है नहीं, जो है वह देह में रहने वाले देहपरिमाण आत्मा का ही अंश है। शरीर के दो भागों में रहने पर भी आत्मा एक ही है। इस प्रकार युक्तिवाद से जैनाचार्य आत्मा के स्वदेह परिमाणत्व को भली भांति सिद्ध करते हैं।

न्यायमत का इस प्रकार खंडन करके जैन दार्शनिक युक्ति पूर्वक सिद्ध करते हैं कि आत्मा व्यापक नहीं बल्कि देह परिमाण ही है। उनका अनुमान प्रयोग भी यहाँ देखने लायक है। वे कहते हैं कि, आत्मा व्यापक नहीं है, क्योंकि वह चेतन है। व्यापक पदार्थ चेतन नहीं हो सकता। उदाहरण स्वरूप आकाश। आत्मा चेतन है इसलिये वह अव्यापक है। आत्मा अव्यापक है इसका अर्थ यही है कि वह देह परिमाण है ; क्योंकि शरीर में उसका अस्तित्व देखा जाता है।

जैन सिद्धान्तानुसार जीव 'कम्मसंजुत्तो' अथवा 'पौद्‌गलिकादृष्टवान्' हैं; पहिले इस बात की ओर संकेत किया जा चुका है। जो नास्तिक हैं— जो कर्मफल नहीं मानते, और परलोक भी नहीं मानते, वे भी जीव को अदृष्टवान कहकर अपने ही मत का खंडन करते हैं। कर्म के साथ फल का अच्छेद संबन्ध न माना जाय तो 'कृतप्रणाश' और 'अकृताभ्यागम' दोष आते हैं, यह बात भी पहिले कही जा चुकी है। सारांश यह कि परलोक माने बिना काम नहीं चल सकता। यदि कहा जाय कि परलोक प्रत्यक्ष दिखलाई नहीं देता, तो फिर उसे क्यों माना जाय? इसका समाधान यह है कि यह कहना ठीक नहीं है कि परलोक प्रत्यक्ष नहीं दिखता इसलिये उसे न मानना चाहिये। हम पितामह, प्रपितामह आदि अपने पूर्वजों को नहीं देख सकते हैं, किन्तु इससे क्या यह कह सकते हैं कि वे थे ही नहीं? कोई नास्तिक यह कहे कि किसी ने भी कभी परलोक नहीं देखा तो उसकी यह बात मानने योग्य नहीं है; क्योंकि वह कोई सर्वज्ञ नहीं है।

केवल ज्ञानी पुरुष परलोक देख सकते हैं। जैन और आस्तिक भी यह बात मानते हैं।

नास्तिक यहाँ कहेंगे कि, परलोक हो तो उसका कुछ कारण भी तो होना चाहिये। वह कारण क्या है? परलोक का कारण अदृष्ट को मानें तो 'अनवस्था' दोष आ जायगा। यदि यह कहो कि रागद्वेषादि के कारण परलोक है तो फिर आप निष्कर्म अवस्था के विषय में क्या कहेंगे? क्योंकि संसारी मात्र रागद्वेषवश होते हैं। यदि कहो कि हिंसादि क्रिया के लिये परलोक-व्यवस्था माननी ही चाहिये तो यह भी उचित नहीं है, क्योंकि कभी-कभी क्रिया-फल का व्यभिचार देखा जाता है। हिंसादि पापकर्म करने वाले धनधान्य के बड़े वैभव को भोगते देखे जाते हैं, दूसरी ओर सत्कर्म करनेवाले सज्जन-पुरुष को अति दीन दशा भोगनी पड़ती है। इस प्रकार कर्मफल-व्यभिचार देखते हुए यह नहीं कहा जा सकता कि कर्मफल है और अवश्य ही है। कर्मफल ही नहीं है तो फिर परलोक मानने की क्या आवश्यकता रही?

जैन दार्शनिकों ने इन तीनों आपत्तियों का उत्तर दिया है: वे नास्तिकों से कहते हैं कि, तुम्हारी बात अमुक अंश में, अमुक अपेक्षा से ठीक है। परन्तु इससे परलोक या अदृष्ट के सिद्धान्त में कोई दोष नहीं आता। जैन मानते हैं कि, जीव अनादि काल से कर्मसंयुक्त है। इसमें आप अनावस्था दोष बतलावें तो वह भूल है। रागद्वेषादि के कारण भवभ्रमण करना पड़ता है और इसीलिये निष्कर्मावस्था असंभव हो जाय, ऐसा आप कहें तो क्षण भर के लिये आपकी

यह बात मान ली जा सकती है, परन्तु फिर भी परलोक तो आपको मानना ही पड़ेगा। वास्तविक बात यह है कि, जब तक जीव की मुक्ति नहीं होती तब तक यह रागद्वेष के वशीभूत रहेगा और कर्म तथा कर्मफल के चक्र पर चढ़ेगा। पापी दिखते पुरुष का वैभव वास्तव में उसके पूर्व जन्म के पुण्य का फल है। इसी प्रकार पुण्यात्मा पुरुष का दुःख उसके पूर्वजन्म के पाप कर्म का परिणाम है ऐसा आपको मानना चाहिये। यह भी निश्चित है कि, भविष्य में दुष्ट पुरुष की दुर्गति और सज्जन की उत्तम स्थिति होगी ही। बाहर से दिखने वाले सुख-दुःख को देखकर कर्मफल और परलोक इन्कार करने का साहस न करना चाहिये।

जैन लोग आगम-प्रमाण को मानते हैं और परलोक की पुष्टि में उसका उपयोग भी करते हैं। 'शुभः पुण्यस्य' 'अशुभः पापस्य' अच्छे कर्म का फल भी अच्छा और बुरे कर्म का फल भी बुरा ही होगा, इस जिनवचन में किसी को तनिक भी शंका न करनी चाहिये। अदृष्ट के विषय में आनुमानिक प्रमाण भी यथेष्ट मिल सकते हैं। एक गुणवती स्त्री के एक साथ दो पुत्रों का जन्म होता है। समय बीतने पर इन दोनों भाइयों के बल विद्या आदि में महदन्तर देखा जाता है। अदृष्ट को न मानें तो बतलाइये इस विलक्षणता का आप क्या स्पष्टीकरण करेंगे ?

जैन मतानुसार अदृष्ट पुद्गलघटित है। अर्थात् दूसरे जन्म में आत्मा किस प्रकार का शरीर धारण करेगी वह उसके पूर्वजन्मार्जित तत्संश्लिष्ट कर्म परमाणुओं से निर्दिष्ट होता है। आत्मा अदृष्टाधीन है। उसके पैरों में कर्म पुद्गल रूप् जंजीरें पड़ी हैं। नैयायिक अदृष्ट को आत्मा का विशेष गुण कहते हैं। सांख्यमतानुसार अदृष्ट प्रकृति के विकार के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। बौद्ध अदृष्ट को वासनास्वभाव कहते हैं। वेदान्ती उसे अविद्यारूप मानते हैं। जैन अदृष्ट को पौद्गलिक सिद्ध करके इन सब मतों का परिहार कर देते हैं।

जीव अथवा आत्मा के विषय में जैन क्या मानते हैं इसका मैंने संक्षेप में वर्णन किया है। सांख्यादि मतों के साथ जैन मत कुछ अंशों में मिलता है तो कुछ अंशों में भिन्न है। इससे इतना तो अवश्य प्रतीत होता है कि, जैन दर्शन भारतवर्ष का एक अति प्राचीन स्मरणातीत युग का दर्शन है। यह बात बिल्कुल मानने लायक नहीं है कि, जैन दर्शन का प्रादुर्भाव बौद्ध युग के बाद में हुआ है, अथवा गौतम बुद्ध के समय का यह एक विचार प्रवाह है।

[शेषांश पृष्ठ ३२० पर]

जैन धर्म व जैन प्रतिमाएँ

[पूर्वानुवृत्ति]

गुजराती : कन्हैयालाल भाईशंकर दवे   अनु० भँवरलाल नाहटा

वृहत्संहिताकार जिनप्रतिमा के काल विधान का उल्लेख करते हुए बतलाते हैं कि 'जिनके हाथ आजान बाहु अर्थात् गोडों तक पहुँचे हुए, छाती पर श्रीवत्स चिह्न, दिगम्बर तरुण और स्वरूपवान, प्रशान्त-मूर्ति हों ऐसी अर्हत् देव की प्रतिमा बनाना चाहिए।'[१५] ऐसा ही वर्णन प्रतिष्ठा सारोद्धार में भी किया गया है। यों जिन प्रतिमा सौम्य, शान्त और योग ध्यानमय निर्माण करने का शास्त्रकारों ने सूचित किया है। विशेष में प्रत्येक तीर्थंकरों के लांछन उनके परिकर में रखने को भी बतलाया है। प्रवचन सारोद्धार[१६] एवं अभिधान चिन्तामणि नाममाला में ऋषभादि चौबीस तीर्थंकरों के लांछन अनुक्रम से बतलाते हुए वृषभ, हाथी, घोड़ा, बन्दर, क्रौंच, कमल, स्वस्तिक, चन्द्र, मकर, श्रीवत्स, गैंडा, महिष, शूकर, श्वान, वज्र, हरिण, अज, नन्द्यावर्त्त, घट, कूर्म, नीलोत्पल, शंख, नाग और सिंह आदि नाम प्रस्तुत किए हैं। ऐसा ही उल्लेख रूपमण्डन और रूपावतार में भी दिया गया है।[१७] इस प्रकार प्रत्येक जिन भगवान की प्रतिमा में लांछन बताये जाते थे जिसके आधार से वह किस तीर्थंकर की मूर्ति है, यह जाना जा सकता है। तीर्थंकर की मूर्त्तियों के तीन प्रकार बतलाये गये हैं। (१) सुन्दर देव-देवियाँ उत्कीर्णित परिकर वाली, (२) सादी, केवल पूजन योग्य, (३) आयाग पट्ट की। इन तीनों में जिन भगवान का कला विधान एक समान होता है, केवल परिकर या आस-पास के शिल्प में ही सामान्य फेरफार मालूम होता है।

---

[१५] वृहत् संहिता, अ० ५८ श्लोक ४८।

[१६] वसह गय तुरय वानर कुंच कमलं च सत्थिओ चंदे।
मयर सिरिवच्छ गंडय महिस वराहो वसणोय ॥३७६॥
वज्जं हरिणो छगल नंदावत्तोय कलस कुंमोय।
नीलुप्पल संखक फणी सिंहोअ निणाण चिइन्धाइ ॥३८०॥—प्रवचन सारोद्धार, द्वार १६।

[१७] रूपमंडन, अ० ६, श्लो० ५-६; रूपावतार, अ० ७, श्लो० ५-६; अभिधान चिन्तामणि नाम माला, १, श्लो० ४७-४८।

ऋषभदेव आदिनाथ

भगवान ऋषभदेव जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर होने से उन्हें आदिनाथ भी कहा जाता है, फिर वृषभनाथ रूप में भी उन्हें सम्बोधित करने का विकल्प जैन ग्रन्थों में बतलाया है। हिन्दू धर्म में ऋषभदेव को विष्णु का एक अवतार रूप में माना है। उन्होंने लाखों वर्ष पर्यन्त राज्य करने के पश्चात् साधु दीक्षा लेकर केवल-ज्ञान प्राप्त किया था। उनके मुख्य गणधर पुण्डरीक माने जाते हैं। उनके चितास्थान पर सौ स्तूप निर्माण किए गए थे। उनका देव वृक्ष न्यायग्रोध (वड़), यक्ष गोमुख और यक्षिणी चक्रेश्वरी होना धर्म ग्रन्थों के आधार से जाना जाता है। जब वे माता के गर्भ में थे तब उनकी माता ने जो स्वप्न देखे उनमें सर्वप्रथम स्वप्न में वृषभ आया था जिससे लांछन में उसे प्रथम स्थान मिला है। उनके यक्ष गोमुख का मुंह भी वृषभ जैसा होने का वर्णन मिलता है।

आदिनाथ ऋषभदेव की छोटी-बड़ी सेकड़ों प्रतिमाएँ गुजरात में मिलती हैं। ऐसी एक भव्य प्रतिमा आबू पर विमलवसही में विराजमान है। विमल वसही के वे मूलनायक होने से उनकी प्रतिमा आदर्श उदाहरण स्वरूप बनाई गई है। उनके परिकर और पीठिका में यक्ष, शासन देवी, इन्द्र, न्यायग्रोध वृक्ष, छत्र आदि उत्कीर्णित किये गये हैं, तदुपरान्त वृषभ का लांछन नीचे सुन्दर रूप में बतलाया है। शत्रुञ्जय पर सूर्यकुण्ड के दरवाजे के पास ऋषभदेव भगवान का तेरहवीं शती में निर्मित प्राचीन मन्दिर है, उसमें भी भगवान ऋषभदेव की कमनीय प्रतिमा विराजमान है। ऐसी ही अन्य प्राचीन प्रतिमाएँ खंभात के बारावाड़ स्थित मन्दिर में, शंखेश्वर पार्श्वनाथ जिनालय के चार नम्बर देहरी में, पाटण के अष्टापदनी में, गिरनार पर मेलकवसही की टोंक में, सज्जन मंत्री निर्मापित मन्दिर में, चौमुखजी की टूंक में, दहेगाम तालुका के मगोड़ी गाँव में स्थित मन्दिर में, शत्रुञ्जय पर रामपोल में प्रवेश कर दाहिने हाथ की ओर मोतीशा सेठ की टूंक के मुख्य मन्दिर में, तलाना के पास तालध्वज टेकरी पर, आबू पर भीमासाह के मन्दिर में, बम्बई के गौड़ीजी के मन्दिर में विराजमान हैं। बीजापुर के पास महुड़ी गाँव में से प्राप्त धातु मूर्तियों में आदिनाथ भगवान की भी एक प्रतिमा है जो छठी-सातवीं शताब्दी का होना उसके पृष्ठ भाग में उत्कीर्णित लेख से प्रमाणित है। इस प्रकार गुजरात में श्री आदिनाथ भगवान की प्राक् कालीन मूर्तियाँ प्राप्त हैं जिसकी लम्बी सूची देकर यहाँ अधिक विस्तार करना अनावश्यक है। अकोटा से प्राप्त ऋषभनाथ की धातु प्रतिमा गुप्तोत्तर काल का एक विरल नमूना माना जा सकता है। डॉ० श्री उमाकान्त

प्रेमानन्द शाह ने 'कुमार' में उसका विशद विवेचन किया है।[१८] बड़ौदा म्यूजियम में स्थित भगवान ऋषभदेव की कायोत्सर्ग ध्यानस्थ प्रतिमा आकोटा से प्राप्त है, जिसका कला सौष्ठव अद्भुत सौन्दर्य प्रकट करता है। श्वेताम्बर तीर्थंकर प्रतिमाओं में अति प्राचीन यह धातु प्रतिमा पांचवी शताब्दी की होने का जैन प्रतिमा और कलाशास्त्र के विद्वान विवेचक डा० उमाकान्त भाई शाह ने बतलाया है।

अजितनाथ

दूसरे तीर्थंकर अजितनाथ कहलाते हैं। उनका लांछन हाथी है। उनकी माता ने जो स्वप्न देखे, उनमें हाथी मुख्य होने से उनका लांछन भी हाथी रखा गया है। अजितनाथ भगवान की प्रतिमा खड़ी या बैठी ध्यानस्थ होती है। जैन पारिभाषिक भाषा में 'खड्गासनमूर्ति' शास्त्रकारों ने बताया है। उनके कितने ही परिकरों में लांछन की भाँति यक्ष-यक्षिणी आदि भी अंकित किए मालूम देते हैं। अजितनाथ की कितनी ही प्राचीन प्रतिमाएँ गुजरात से प्राप्त हुई है, उनमें तारंगा पर्वत पर कुमारपाल द्वारा संस्थापित प्रतिमा नामाङ्कित और रम्य है। इसके अतिरिक्त प्रभास में अजितनाथ भगवान का मन्दिर है जिसमें वे मूलनायक रूप में विराजमान हैं। बनासकांठा जिला में पालनपुर के पास मोडका गाँव में अजितनाथ भगवान का एक प्राचीन जिनालय है। इसके उपरान्त अहमदाबाद में श्रीपाल की पोल में, सूरत में नामावाला की पोल में, धान और धांगध्रा के जैन मन्दिरों में एवं आबू की विमलवसही की देहरी न० ४ व ४४ में अजितनाथ भगवान की भव्य और प्राचीन मूर्तियाँ संप्राप्त हैं। इसके अतिरिक्त और भी कितनी ही प्राचीन अर्वाचीन प्रतिमाएँ गुजरात में प्राप्त हैं। भक्तराज सागर चक्रवर्ती परिचारक रूप में उन्हें चमर ढुलाता है। उनकी शास्त्रीय राशि वृष है।

सम्भवनाथ

तीसरे तीर्थंकर सम्भवनाथ हैं। उनका नाम सम्भवनाथ कैसे पड़ा? इसके लिए शास्त्रकारों ने आख्यायिका दी है। उनका लांछन घोड़ा, यक्ष त्रिमुख और यक्षिणी दुरितारी होना बतलाया है।

अन्य तीर्थंकरों की अपेक्षा सम्भवनाथ की मूर्तियाँ अल्प देखने में आती हैं। आबू-देवलवाड़ा स्थित विमलवसही की देहरी नं० २५ में, लूणिगवसही में,

---

१८ डॉ० उमाकान्त शाह, फरवरी १९५२ के 'कुमार' के अंक में 'गुजरात का प्राचीन शिल्प धन' नामक लेख।

भीमाशाह के पित्तल हर मन्दिर की पहली देहरी में, अहमदाबाद गोलाइनी पोल के जिन मन्दिर में, सूरत के गोपीपुरा के मन्दिर में और अहमदाबाद की महुरत पोल के जिनालय में सम्भवनाथ की सुन्दर प्रतिमाएँ दृष्टिगोचर होती हैं। इनमें प्रत्येक के परिकर के नीचे लांछन स्वरूप घोड़ा और उभयपक्ष में कोने पर यक्ष-यक्षिणियाँ उत्कीर्णित हैं। कितनों में तो तोरण, चामरधारी देव, इन्द्र, नवग्रह आदि का भी व्यक्तिकरण है।

अभिनन्दननाथ

चतुर्थ तीर्थंकर अभिनन्दननाथ हैं। उनका लांछन कपि—बानर, यक्ष, ईश्वर और शासनदेवी काली हैं।

अभिनन्दन स्वामी की प्रतिमाएँ भी थोड़ी ही मिलती हैं। उनमें शत्रुञ्जय पर केशवजी की टूंक स्थित देहरासर की प्रतिमा मुख्य है। वहाँ मूलनायक रूप में वे विराजित हैं। इसके सिवा खेरालु तालुका के पीपरदर गाँव में, पाटण के कोकाना पाड़ा में, साणंद तालुका के मोगर गाँव में और खंभात के लाडवाड़ स्थित जिनालय में अभिनन्दन भगवान की प्राचीन व कलापूर्ण प्रतिमाएँ प्राप्त हैं।

सुमतिनाथ

सुमतिनाथ पांचवें तीर्थंकर हैं। उनका लांछन क्रौंच पक्षी व शासनदेवी महाकाली है।

गुजरात में सुमतिनाथ भगवान की प्रतिमाएँ अच्छी संख्या में प्राप्त हैं। आबू पर विमलवसही की देहरी नं० २७ में, लूणिगवसही की देहरी नं० ४० में सुमतिनाथ भगवान की सुन्दर प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित हैं। अहमदाबाद में फताशा की पोल में, पीपरड़ो की पोल में, शंखेश्वरजी में देहरी नं० ४८ में, शत्रुञ्जय पर नमण के टांके के पास चौमुखजी के रास्ते आदि स्थानों के जिनालयों में सुमतिनाथ की कलापूर्ण प्रतिमाएँ प्राप्त हैं। इनके अतिरिक्त अर्वाचीन काल की प्रतिमाएँ तो संख्याबद्ध मिलती हैं।

पद्मप्रभ

छट्ठे तीर्थंकर पद्मप्रभ हैं। इनका लांछन रक्त कमल, यक्ष कुसुम और शासनदेवी श्यामा है। पद्म, यह कमल का ही अपर नाम होने से उनका लांछन भी पुष्प और यक्ष का नाम भी कुसुम अर्थात् फूल नाम देखते पुष्प के साथ उनका घनिष्ठ सम्बन्ध विदित होता है।

इन तीर्थंकर की संख्याबद्ध प्राचीन अर्वाचीन प्रतिमायें संप्राप्त हैं। आबू पर विमलवसही की देहरी न० २८ में, लूणग वसही की देहरी न० ४१ में

इनकी मनोरम प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित हैं। इनके अतिरिक्त शत्रुंजय पर हाथी पोल के पास, कपर्दी यक्ष के बाजू में, मोतीशाह की टूंक में, धीणोज के पास पिंडारपुरा गाँव में, बीजापुर तालुका के आजोल गाँव में, महुड़ी में, डांगरवा के निकट बोरू गाँव में, दहेगाँव तालुका के प्रांतिया गाँव में, अहमदाबाद में तलीया की पोल में व सौराष्ट्र के वंथली आदि गाँवों के जैन मन्दिर में पद्मप्रभ की आल्हादकारी प्रतिमाएँ संप्राप्त हैं, इनके अतिरिक्त और भी कितनी ही प्रतिमाएँ मिलती हैं।

सुपार्श्वनाथ

ये सातवें तीर्थंकर हैं। इनका लांछन स्वस्तिक होने पर भी कोई-कोई ग्रन्थकार एक, पांच या नौ फण युक्त नाग बतलाते हैं। इनका यक्ष मातंग और शासन देवी शान्ता है।

सुपार्श्वनाथ की जो थोड़ी बहुत मूर्तियाँ मिलती हैं, उनमें आबू पर विमलवसही की देहरी नं० २९ में, लूणगवसही की देहरी नं० ४२ में प्रतिष्ठापित प्रतिमाएँ प्राचीन और मनोहर हैं। इनके अतिरिक्त राजकोट के मांडवी चौक स्थित जिनालय में, शत्रुंजय पर मोतीशाह की टूंक स्थित जैन मंदिर में शंखेश्वरजी की देहरी न० १ तथा ७ में सुपार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमाएं स्थापित हैं।

चन्द्रप्रभ

ये आठवें तीर्थंकर हैं। इनका लांछन चंद्र है और यक्षिणी भृकुटी है, जब ये अपनी माता के गर्भ में थे, तब इनकी माता को चन्द्रमा पान करने का दोहद हुआ और स्वप्न में उन्होंने वैसा किया। इससे उनका नाम चन्द्रप्रभ हुआ।

चन्द्रप्रभ भगवान की तो संख्याबद्ध प्रतिमाएँ मिलती हैं। प्रभास में जिनालयों के मुख्य मन्दिर में चन्द्रप्रभ भगवान की भव्य प्रतिमा विराजमान है। गिरनार पर वस्तुपाल तेजपाल की टूंक में चन्द्रप्रभ भगवान का मन्दिर है जिसमें उनकी अद्वितीय प्रतिमा प्रतिष्ठापित है। इसके अतिरिक्त वंथली में, आबू पर विमलवसही की देहरी नं० २६ में, लूणगवसही की देहरी न० १६ में, शत्रुञ्जय पर मोतीशा सेठ की टंक में एवं पुण्य पाप की बारी के पार्श्ववर्त्ती देहरासर में चंद्रप्रभ तीर्थंकर की मूर्त्तियाँ हैं। ये सभी प्रतिमाएं बारहवीं तेरहवीं शताब्दी से अर्वाचीन नहीं हैं। उसके बाद की तो कितनी ही वैसी प्रतिमाएँ प्राप्त हैं। [क्रमशः

जैन पत्र-पत्रिकाएँ : कहाँ/क्या

अमर भारती || जनवरी १९८१

उपाध्याय श्री अमर मुनि के प्रवचनों के अतिरिक्त इस अंक में है 'धर्म और जीवन-व्यवहार' (युवाचार्य महाप्रज्ञ), 'सम्राट अकबर का जैनधर्म से सम्पर्क' (मालचन्द जैन)।

जैन जर्नल || जनवरी १९८१

इस अंक में है 'An Advaitic Criticism of Jainism, a Counter-Criticism' (Arvind Sharma), 'The Nature of Substance in Buddhism and Jainism' (Bhagchandra Jain), Jain Story 'Prabhavati' (Ganesh Lalwani), 'A Brief Account of the Jaina View of Karma' (J. C. Sikdar), 'The Jaina Basthi of Vijayamangalam' (K. Venkatachari).

जैन यतिगुरुकुल स्मारिका १९८०

जैन यति गुरुकुल सम्पर्कित तथ्य के अतिरिक्त इस अक में है 'आचार्य श्री पूज्यजी श्री जिनचन्द्र सूरि : जीवन परिचय' (राजकुमारी बेगानी), 'खरतरगच्छ का जैन जगत को योगदान' (चाँदमल सिपानी), 'वर्तमानोपयोगी जैन धारा' (आचार्य जिनचन्द्र सूरि), 'भक्ति : तुलनात्मक अध्ययन' (राजकुमारी बेगानी), 'भारतीय राजनीति में जैनधर्म का योगदान' (लक्ष्मी नाहटा), 'जैन चित्रकला' (गणेश ललवानी), 'जैन धर्म के विविध सम्प्रदायों में समन्वयात्मक भूमिका' (शान्तिलाल खेमचन्द्र शाह), 'विदेशों में जैनधर्म' (ज्योति प्रसाद जैन), 'श्री चिन्तामणि जैन मन्दिर बीकानेर की धातु प्रतिमाएँ' (प्रकाश चन्द्र भार्गव), 'वर्तमान वैज्ञानिक उपलब्धियाँ एवं भगवान महावीर की वाणी की उपादेयता' (कुमारपाल सिंह वैद)।

तीर्थंकर || नवम्बर-दिसम्बर १९८०

णमोकार मंत्र विशेषांक-१

संपादकीय के अतिरिक्त इस अंक में है, 'मन्त्र शक्ति एक चिन्तन' (जी० आर० जैन), 'मन्त्र शिरोमणि णमोकार' (इन्द्रमल भगवान जी),

'सार्वभौम समन्वय महामन्त्र : णमोकार' (कन्हैयालाल सरावगी), 'सकल प्राण उड़े चलुक महामरण पारे' (गणेश ललवानी), 'णमोकार मन्त्र महात्म्य' (नाथूलाल शास्त्री), 'जैन लोक जीवन का आद्यमंत्र' (महेन्द्र सागर प्रचण्डिया), 'आचार्य : एक अनुचिन्तन' (द्विवेन्द्र मुनि शास्त्री), 'णमोकार मन्त्र एक कल्पतरु' (नरेन्द्र प्रकाश जैन), 'कैन्सर कथा । संदर्भ णमोकार' (गुलाबचन्द खेमचन्द), 'नवकार साधन की सच्ची प्रक्रिया' (मुनि अमरेन्द्र विजय), 'णमोकार : आत्म-विकास का दर्शन' (डा० निजामुद्दीन), 'णमोकार मंत्र : एक क्रान्ति सूत्र' (प्रलयंकर), 'णमोकार मंत्र साहित्य : एक अनुशीलन' (अगरचन्द नाहटा), 'णमोकार मन्त्र साहित्य संदर्भ', 'यात्री शब्दकोश' (हिन्दी-कन्नड) ।

तुलसी प्रज्ञा || दिसम्बर १९८०

इस अंक में है 'अंगश्रुत के परिप्रेक्ष्य में पूर्वगत श्रुत' (पं० फूलचन्द शास्त्री), 'सांस्कृतिक संकट के बीच प्राकृतों की समस्या' (जगन्नाथ उपाध्याय), 'आधुनिक मनोविज्ञान के संदर्भ में आचारांग सूत्र का अध्ययन' (सागरमल जैन), 'अनाहारक अवस्था' (महावीर राज गेलड़ा), 'आगमों में गणितीय सामग्री तथा उसका मूल्यांकन' (लक्ष्मीचन्द जैन), 'अनुयोगद्वार सूत्र में रस विवेचन' (कमलेश कुमार जैन), 'जैनागमों में नारी का स्थान' (कोमलचन्द जैन), 'अर्धमागधी आगम साहित्य के परिप्रेक्ष्य में मूलाचार का अध्ययन' (फूलचन्द जैन 'प्रेमी') ।

श्रमण || जनवरी १९८१

इस अंक में है 'साहित्य में गोम्मटेश्वर बाहुबली' (सागरमल जैन), 'शिल्प में गोम्मटेश्वर बाहुबली' (मारुति नन्दन प्रसाद तिवारी), 'बाहुबली : चक्रवर्ती का विजेता' (उपाध्याय श्री अमर मुनि) ।

सम्बोधि || भाग ८, अंक १-४

इस अंक में है, 'The Conception of Reality in Jaina Metaphysics as revealed in the Works of Acarya Kundakunda' (J. C. Sikdar), 'Jain Temple Inscriptions of Barakana' (Ram Vallabh Somani), 'Dharma-Adharma' (Suzuko Ohira), 'On Karanas in Jaina Calendar' (S. D. Sharma &

Sajjan Singh Lishk), 'Haribhadra, Jainism and Yoga' (Shantilal M. Desai), 'सर्वतोभद्रिका जिन मूर्तियाँ या जिन चौमुखी' (मारूति नन्दन प्रसाद तिवारी), 'भेद-विज्ञान : मुक्ति का द्वार' (सागरमल जैन), 'हस्तिमल के विक्रान्त भैरव में तीर्थंकर ऋषभदेव' (बापूलाल आजना), 'श्रावक कविओनी केटलीक अप्रकट गुजराती रचनाओं,' 'श्रावक कवि गंगकृत गीतो' (भोगीलाल ज० सांडेसरा), 'ज्ञान पंचमी स्तवन' (र० म० शाह), लक्षण कृत 'सूक्ति रत्न कोष' (नीलांजना एस० शाह), 'श्रीमद सूराचार्य विरचित दानादि प्रकरणम्' (अमृतलाल मो० भोजक, नगीन जी शाह) ।

श्रमणोपासक ॥ जनवरी १६८१

आचार्य श्री नानालाल जी के प्रवचनों के अतिरिक्त इस अंक में है 'जैन दर्शन और आधुनिक मानस' (भागचन्द्र जैन भास्कर) ।

[पृष्ठ ३१२ का शेषांश]

न्याय, वेदान्तादि दार्शनिक मतों के साथ यदि जैन सिद्धान्तों की कुछ समानता प्रतीत होती हो, जैन दर्शन में किसी प्रकार की विशिष्टता दिखलाई देती हो तो हम सहज ही में यह अनुमान कर सकते हैं कि इतिहास के जिस विस्मृत युग में न्यायादि मतों का प्रचार हुआ है, उसी युग में जैन सिद्धान्तों का भी प्रचार हुआ होना चाहिए। और इतिहास एवं पुरातत्व यही बात सिद्ध करता है ।

Vol. IV No. 10 : Titthayara : February 1981
Registered with the Registrar of Newspapers for India
under No. R. N. 30181/77

Hewlett's Mixture
for
Indigestion

DADHA & COMPANY

and

C. J. HEWLETT & SON (India) PVT. LTD.

22 STRAND ROAD
CALCUTTA-700001